**ओ३म्**

**‘वैदिक मान्यतायें ही धर्म व इतर विचारधारायें मत-पन्थ-सम्प्रदाय’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

धर्म शब्द की उत्पत्ति व इसका शब्द का आरम्भ वेद एवं वैदिक साहित्य से हुआ व अन्यत्र फैला है। संसार का सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद है। वेद ईश्वर प्रदत्त वह ज्ञान है जो सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। यह ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में इस संसार के रचयिता परमेश्वर वा सृष्टिकर्त्ता से आदि चार ऋषियों वा मनुष्यों को मिला था। परमात्मा ने वेदों का ज्ञान क्यों दिया और इस बात का क्या प्रमाण है कि वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है? वेदों का ज्ञान परमात्मा ने दिया है, इसका प्रमाण यह है कि ज्ञान व विज्ञान का धारक व पालक संसार में एकमात्र ईश्वर है, अन्य कोई नहीं है। मनुष्यों को सिखना पड़ता है। यह उन्हीं से सीख सकता है जो पहले से कुछ सीखे हुए होते हैं। अब प्रश्न होता है कि सृष्टि के आरम्भ में जो मनुष्य उत्पन्न हुए उनको सिखाने वाला कौन था? इसका उत्तर एक ही है कि वह इस सृष्टि की रचना करने वाला ईश्वर ही था। उसने ज्ञान, विज्ञान व अपनी सर्वव्यापकता, सर्वज्ञता और सर्वशक्तिमतता से इस समस्त अनन्त संसार को पूर्व कल्प के अनुसार रचा है। मनुष्य को आंख, नाक, कान, जिह्वा व त्वचा आदि ज्ञानेन्द्रियां भी उसी ने अपने ज्ञान, विज्ञान, सर्वज्ञता व सर्वशक्तिमतता के गुण से ही बनाकर मनुष्यों को प्रदान की हैं। मनुष्य सृष्टि के आरम्भ काल में अब प्रथम उत्पन्न हुआ तो उसका पालन करने के लिए माता व पिता तथा ज्ञान व शिक्षा देने के लिए गुरु, अध्यापक व आचार्य संसार में नहीं थे। उत्पन्न हुए सभी युवा स्त्री-पुरुष भाषा व ज्ञान से शून्य थे क्योंकि बिना पढ़े कोई ज्ञानी नहीं हो सकता अर्थात् जन्म से ही कोई भी मनुष्य भाषा व ज्ञान से युक्त नहीं होता। भाषा मनुष्यो को सीखनी पड़ती है। पहले माता-पिता व बाद में विद्यालय मे आचार्य व गुरु भाषा सिखाने के साथ ज्ञान व विज्ञान पढ़ाते हैं। संसार के आरम्भ में माता-पिता व आचार्यों के न होने के कारण एक ईश्वरीय सत्ता ही बचती है जिनसे मनुष्य को भाषा व ज्ञान प्राप्त होता व हो सकता है। यह इस कारण से आदि सृष्टि के मनुष्यों को भाषा व धर्माधर्म का ज्ञान ईश्वर से मिलना ही प्रमाणित तथ्य है। इसका अन्य कोई उत्तर नहीं है। ईश्वर से मनुष्यों को ज्ञान मिलना निर्दोष उत्तर है तथा अन्य सभी कल्पनायें व अनुमान दोषपूर्ण हैं जो परीक्षा करने पर असत्य व प्रमाणहीन सिद्ध होते हैं। ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी व सर्वज्ञ सत्ता होने के कारण जीवात्मा की आत्मा में ही ज्ञान को भाषा सहित स्थापित करती है व देती है। ज्ञान भाषा में ही निहित होता है, अतः ज्ञान के साथ भाषा का मिलना भी सुनिश्चित है। आजकल भी सम्मोहन द्वारा प्रेरणा करके ज्ञान के उदाहरण मिलते हैं। बहुत से लोग इस विद्या को सीख लेते हैं और इसी से अपनी आजीविका चलाते हैं। ईश्वर तो जीवात्मा के भीतर भी विद्यमान और सर्वज्ञ है तो वह जीवात्मा को आत्मस्थ होने से प्रेरणा क्यों नहीं कर सकता? यह सर्वथा सम्भव है। हम जानते हैं कि माता का गर्भस्थ शिशु माता के व्यवहार के अनुरूप गुण-कर्म-स्वभाव वाला बनता है। इसका कारण है कि गर्भ में होते हुए जबकि उसका शरीर निर्माणाधीन होता है वह अपनी माता के आचार, विचार, भाषा व भोजन आदि से प्रभावित होता रहता है। जन्म के बाद माता की गोद में वह स्वयं सुरक्षित अनुभव करता है और शान्त रहता है जबकि अन्य किसी के लेने पर वह प्रायः रोना आरम्भ कर देता है। यह भी एक प्रकार का विज्ञान है जिससे पता चलता है कि माता के साथ बच्चे का तादात्मय अर्थात आत्मा का आत्मा के साथ वाला सम्बन्ध होता है। शरीर से पृथक होने पर भी दोनों आत्मा से आबद्ध रहते हैं। अतः सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर का वेदों का ज्ञान देना सत्य सिद्धान्त है।

 वेदों की संहितायें, उनके संस्कृत व हिन्दी भाषा में भाष्य तथा वेदों के अनेक व्याख्या ग्रन्थ 4 ब्राह्मण ग्रन्थ, 6 दर्शन, 11 मुख्य उपनिषदें, मनुस्मृति आदि ग्रन्थ सम्प्रति उपलब्ध हैं। इनका अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि मनुष्य को जितना सत्य-सत्य ज्ञान आवश्यक है वह चार वेदों में सृष्टि के आदि काल से ही विद्यमान है। सभी प्राचीन ऋषियों से लेकर महर्षि दयानन्द तक ने वेदों को सब सत्य विद्याओं का कोष व ग्रन्थ स्वीकार किया है। वेद में आध्यात्म के साथ सभी भौतिक विद्याओं का भी सूत्र रूप में समावेश है। इसका सविस्तार उल्लेख महर्षि दयानन्द ने अपनी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थ में किया है। अतः वेद ज्ञान-विज्ञान सहित कर्तव्याकर्तव्य वा धर्माधर्म के ग्रन्थ सिद्ध होते हैं। धर्म उस ज्ञान को ही कहते हैं जिससे मनुष्य को अपने कर्तव्य व अकर्तव्य का बोध होता है व जिसका पालन करने से अभ्युदय व निःश्रेयस की सिद्धि हो। क्या वेदों में व वैदिक साहित्य में कहीं किसी मान्यता व सिद्धान्त की कोई कमी थी जिसकी देश-देशान्तर के किसी मनुष्य ने अनुसंधान व खोज की हो जिसने अधूरे वेद ज्ञान को पूर्णता प्रदान की हो? जब ऐसा कोई सन्दर्भ व प्रमाण किसी मत व पन्थ में उपलब्ध नहीं होता और व वह इसका दावा ही करते हैं तो फिर विश्व के मनुष्यों के लिए किसी नवीन मत की आवश्यकता ही नहीं रहती। मनुष्य के सभी कर्तव्य व अकर्तव्य वेदों व महाभारत के पूर्व काल के वैदिक साहित्य में सर्वांगपूर्ण रूप से विद्यमान होने के कारण वेद अपने आप में पूर्ण मनुष्य जाति का धर्म है। वेदों की सर्तमान समय में विद्यमानता के कारण मनुष्यों के लिए किसी नये मत की आवश्यकता ही नहीं है। वेद धर्म ईश्वर द्वारा प्रादूर्भूत धर्म है और सभी मनुष्यों के लिए यही धर्म आचरणीय व कर्तव्य है। हमारे मनुस्मृति, उपनिषद्, दर्शन, रामायण, महाभारत व अन्य जितने भी ग्रन्थ हैं उनमें धर्म शब्द का प्रयोग वेद के सिद्धान्तों के आचरण करने से ही सम्बन्ध रखता है। वेदों का धर्म सर्वथा पूर्ण धर्म है। यही कारण है कि सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक और महाभारत काल के भी बहुत बाद तक वैदिक धर्म ही भारत सहित विश्व का एकमात्र धर्म रहा है। महाभारत काल तक अन्य किसी धर्म के अस्तित्व का उल्लेख व विवरण विश्व के साहित्य में उपलब्ध नहीं है।

 महाभारत काल के बाद संसार में अनेक मत-मतान्तर जिन्हें रिलीजन, मजहब, सम्प्रदाय व पन्थ भी कह सकते हैं, अस्तित्व में आये। कारणों पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि महाभारत के महायुद्ध के बाद आलस्य व प्रमाद के कारण वैदिक धर्म व वैदिक सामाजिक व्यवस्था विशृंखलित हो गई। समयानुसार जैमिनी ऋषि पर आकर ऋ़षियों की परम्परा भी समाप्त हो गई और वेदों के पारदर्शी विद्वानों की संख्या भी नगण्य हो गई। विश्व में वेदों का प्रचार बन्द हो गया। देश के अल्पज्ञानी विद्वान मनमानी करने लगे और सर्वत्र अल्पज्ञता से पूर्ण नये नये अवैदिक विधान दिखाई देने लगे। अन्धकार बढ़ता गया और कुछ अच्छे आशय वाले सज्जन पुरुषों ने देश व विदेश मं समाज के हित की दृष्टि से अपनी-अपनी योग्यता व क्षमता के अनुसार लोगों को अपने मत में संगठित व दीक्षित किया। यह सभी लोग वेदों के ज्ञान से परिचित नहीं थे। उन लोगों के सम्मुुख वेदों का पुराना आचार, विचार व व्यवहार ही अनेकों विकृतियों के साथ प्रचलित था। उन्हें जो उचित लगा उन्होंने प्रचलित किया और उन-उन के नये मत, पन्थ, सम्प्रदाय ही प्रचलित होकर विस्तार को प्राप्त हुए। अनेकों प्रकार के चमत्कार आदि भी इन वेदेतर नये मतों के अनुयायियों ने समय-समय पर अपने-अपने मत में मिला लिए। नये मतों की संख्या समय व स्थान के अनुसार वृद्धि को प्राप्त होती रही। यह मत व पन्थ धर्म न होकर मत, पन्थ, रिलीजन, मजहब व सम्प्रदाय आदि श्रेणी में आते हैं। भारत से इतर मत व पन्थ जिस भाषा का प्रयोग करते हैं उन भाषाओं में धर्म नाम का शब्द भी नहीं है। धर्म वेद, वैदिक साहित्य व संस्कृत का शब्द है। अन्य मतों की अपनी-अपनी भाषायें होने से उनके अपने-अपने शब्द हैं, उन्हीं से उनको सम्बोधित किया जाना चाहिये। भारत में यह कुछ फैशन सा हो गया है कि देशी व विदेशी सभी मतों व पन्थों को धर्म मान लिया गया है जिससे यथार्थ व सदधर्म वैदिक धर्म के बारे में अनेक प्रकार की भ्रान्तियां फैल गई हैं। वैदिक धर्म जो कि वेद व वेदानुकूल वैदिक साहित्य पर आधारित है औरयुक्ति, तर्क व प्रमाणों पर आधारित जो सत्य मान्यतायें व सिद्धान्त है, वही वैदिक धर्म है। इससे इतर देश व विश्व में जितने भी मत व सम्प्रदाय हैं वह धर्म न होकर, मत-पन्थ-सम्प्रदाय-रिलीजन-मजहब आदि श्रेणी में ही आते हैं और उनके लिए उनकी भाषाओं के उपयुक्त शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिये।

 हमारा इस लेख को लिखने का अभिप्राय यही है कि सत्य, सनातन, ईश्वर प्रदत्त वेद व इसकी शिक्षाओं, मान्यताओं, सिद्धान्तों व विधानों का पालन ही वैदिक धर्म है। इससे इतर, विपरीत, सत्यासत्य मिश्रित आध्यात्मिक व सामाजिक मान्यतायें धर्म नहीं हैं। जो सिद्धान्त व मान्यतायें वेद, ज्ञान व पूर्ण सत्य के अनुरूप व अनुकूल है, वह वैदिक धर्म के अन्तर्गत आ जाते हैं। वैदिक मत से इतर मान्यता व सिद्धान्तों वाले सभी संगठन व समुदाय मत व पन्थ की ही श्रेणी में आते हैं। अतः सुधी व विज्ञ लोगों को वेद से इतर मत-पन्थों के लिए धर्म का प्रयोग न कर उनके लिए उचित व यथार्थ शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिये जिससे धर्म विषयक यथार्थ स्थिति का सबको ज्ञान रहे। धर्म संस्कृत भाषा का शब्द है और इसका प्रयोग मनुस्मृति, दर्शन, उपनिषद, रामायण व महाभारत आदि ग्रन्थों में वेद मत व वैदिक मान्यताओं व सिद्धान्तों के लिए ही हुआ है। इस स्थिति को जान व समझ कर ही सभी मनुष्यों को धर्म शब्द का प्रयोग करना चाहिये।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**